मन व स्वभाव

हमने जाना कि मन आत्मा का सेवक है व अपने स्वामी (आत्मा) को प्रसन्न करने के लिए नित नए - नए भाव उत्पन्न करता रहता है। बुद्धि से परामर्श के उपरांत मन इन्द्रियों द्वारा उस भाव को कार्य-रूप दे देता है। (किन्ही विषयों में व्यक्ति का स्वभाव बन जाने पर मन बुद्धि के परामर्श के बिना ही भाव को इन्द्रियों द्वारा कार्य-रूप दे देता है *(देखें: हम न भूलें-18)*)। सुख मन की अनुभूति है और मन सदैव भौतिक पदार्थों में ही सुख खोजता रहता है। इस प्रकृति का स्वामी न होते हुए भी वह इस प्रकृति को अपनी ईच्छानुसार चलाना चाहता है। मन चाहता है कि सब कुछ उसकी इच्छानुसार चले और उसकी प्रत्येक इच्छा पूर्ण हो जावे। हमारे दुख-सुख (व जन्म-मरण) का कारण यह मन है।

सभी योनि के जीव भोगों को प्राप्त करते है और उन्हे भोगते है। इन भोगों की प्राप्ति के लिए वे भिन्न-भिन्न कर्म करते हैं। पशु-पक्षियों के भोग सीमित होते हैं (भोजन, निवास-स्थल अथवा क्षेत्र ताकि वह सुरक्षित एवं अनुकूल वातावरण में अपना जीवन बिता सके व प्रजनन)। उनकी बुद्धि भी अल्प अथवा विकसित नहीं होती जिस कारण हम पशु-पक्षियों के कर्मों को उनके स्वभाव द्वारा प्रेरित बताते हैं। पशुओं के स्वभाव मे सदा स्वार्थ रहता है। किसी को उनसे कष्ट होता है या नही वे ऐसा नही सोचते। वे केवल अपने स्वार्थ तक ही सोचते है। पशु के स्वभाव मे स्वार्थ के साथ क्रूरता भी हो सकती है।

पशुओं का स्वभाव केवल अपने भोगों की प्राप्ति तक सोचने का होता है और वह भोगों को भोगने के लिए होता है।

- पशु का स्वभाव सोच-विचार कर कार्य करने का नही होता
- पशु का स्वभाव है कि वह भविष्य की नही सोचता
- पशु कभी दूसरे के उपकार व कल्याण की नही सोचता
- पशु कभी अपने आत्म-कल्याण की नही सोचता
- पशु का स्वभाव है कि वह अपनी परतंत्रता चुपचाप सहन कर लेता है (उन्हे हाँका जाता है)

मनुष्य भी भोगों की प्राप्ति कर उन्हे भोगता है। भोगों की प्राप्ति हेतु उसके कर्म भिन्न - भिन्न प्रकार के होते हैं। भोग-प्राप्ति के लिए किए गए कर्म मनुष्य की प्रवृति व उसके स्वभाव को दर्शाते हैं। भिन्न-भिन्न मनुष्यों के एक ही भोग की प्राप्ति के लिए किए गए कर्मों की भिन्नता उनकी बुद्धि के विकसित होने के स्तर की भिन्नता के कारण होती है। पशु-पक्षियों में यह भिन्नता उनकी अविकसित बुद्धि के कारण नहीं दिखती।

मनुष्य के कर्म धर्म-अधर्म का ध्यान रखते हुए अपने पुरूषार्थ द्वारा ही भोगों को प्राप्त करने हेतु होने चाहिए। यह मनुष्य का स्वभाव होना चाहिए कि वह कर्म बुद्धि द्वारा धर्म-अधर्म के मंथन के उपरांत आज्ञा मिलने पर ही करे।

मनुष्य का स्वभाव भोगों को भोगने के लिए प्राप्त करना नही अपितु जीवन के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उन्हें साधन के रूप मे प्राप्त करना होना चाहिए। मनुष्य के स्वभाव मे स्वार्थ तो हो सकता है पर इतना नही कि अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए वह अन्य जनों को कष्ट देना भी उचित समझने लगे। जिस स्वभाव मे क्रूरता आ जावे उसे मनुष्य का स्वभाव नही कहा जा सकता।

- मनुष्य का स्वभाव में सोच-विचार कर कर्म करना है
- मनुष्य सदा भविष्य की सोचता है
- मनुष्य दूसरों के उपकार और कल्याण की सोच सकता है और सोचता भी है
- मनुष्य अपने आत्म-कल्याण की भी सोचता है
- मनुष्य परतंत्रता कदाचित स्वीकार नही करता। पशुओं की भाँति हाँका जाना उससे सहन नही होता। मनुष्य अपने कर्म किसी के आधीन नही अपितु स्वतंत्रता मे करना चाहता है

पशु और मनुष्य के स्वभाव मे भिन्नता है। अपने स्वभाव का अध्यन करते समय इन सब बातों को ध्यान मे रखना चाहिए। मन में उठने वाले भाव संस्कार, परिस्थिति व स्वभाव से प्रेरित होंगे। इन्ही भावों को मन (बुद्धि से परामर्श अथवा उसके बिना) इन्द्रियों द्वारा कार्यरूप देगा। ये कर्म जीव के समक्ष 'कर्म-फल' के रूप में आऐंगे और मृत्यु के पश्चात अगले जन्म को प्रभावित करेंगे। हम कह सकते हैं कि मनुष्य के स्वभावानुसार उसका अगला जन्म होगा।

मन में उठने वाले भाव मनुष्य के स्वभाव के निर्माण का मुख्य कारण हैं। मन व उसका निग्रह हम सभी मनुष्यों के लिए अत्यधिक महत्त्व का विषय है चूँकि यह मन ही हम सब पर सबसे अधिक प्रभाव डालता है। जिस प्रकार सागर में निरंतर उठती लहरें व पवन (परिस्थिति) नाविक को अपने गंतव्य से भटका सकती हैं

Mind and Nature

We have come to know that the mind constantly creates new thoughts in order to please its master (soul). The **mind** after consulting the intellect, gives action to these thoughts through the 'indriy'. (In some cases due to the nature (swabhav) of a person, the mind gets thoughts converted by 'indriy' into actions without even consulting the intellect. *(see Hum Naa Bhooleen-18)*). Happiness is a feeling of the mind and the mind always seeks happiness in material objects. Despite it not being the owner of this nature, it wants to run this nature according to its will. The mind wants everything to go according to its will and every wish of its should be fulfilled. This mind is the cause of our sorrow and happiness (and also of birth and death).

All living beings in the universe desire pleasures and live them. They do different deeds to gain these pleasures. The pleasures of animals and birds are limited to food and habitat so that they can live and breed in a safe and favorable environment. Their intelligence is either less or under-developed, due to which we say that the actions (behavior) of animals and birds are inspired by their nature (instincts). One can easily see selfishness in the nature of animals. They are self-centric and do not care if anyone is harmed by them. In certain species even cruelty and cunningness along with selfishness is visible.

It is the nature of animals to think only about the attainment of their pleasures and that is to enjoy the pleasures.

- The nature of the animal is not to act after thinking
- Animals do not think of the future
- Animals never think about welfare of others
- Animals never think of their own welfare
- It is the nature of the animal to bear its dependence silently (they are driven)

Human beings also desire pleasures and enjoy them. Their actions are of different types for the attainment of pleasures. The actions performed to attain pleasures reflect the instincts and nature of a person. The difference in the actions performed by different human beings for the same type of pleasure are due to the difference in the development level of their intelligence. We do not see this difference among animals and birds because of their underdeveloped intelligence.

The actions of a human being to obtain any pleasure should only be after evaluating 'dharm' and 'adharm' (right and wrong) and through self-effort. It should be the nature of a person that he should work only after getting permission from his intellect.

The nature of human beings should not be to long for pleasures to enjoy them, but to go for them as means for achieving the goal of life. There can be selfishness in the nature of a human being too, but not so much that for the fulfillment of his requirements, he would consider it appropriate to harm others. The nature in which cruelty can be seen, cannot be called as human nature.

- It is in the nature of humans to act after thinking
- Human beings always thinks about the future
- Human being can think of the welfare of others
- Human being thinks of his self-welfare too
- Humans do not accept subordination. They do not tolerate being driven like an animal. Human beings want to live and work in independence

There is a difference in the nature of animals and humans. This should be kept in mind while studying one's nature. The thoughts arising in the mind are inspired by the earlier impressions on it, circumstances and nature of the person. The mind (with or without consultation with the intellect) will give actions to the thoughts through the 'indriy'. These actions will yield their results (karm-phal) and will affect the next birth after death. We can say that the nature of a person defines his next birth.

The thoughts arising in the mind are the main reason for the formation of human nature. The mind and its control is a matter

www.humnaabhooleen.com

उसी प्रकार मन रूपी सागर में उठती भावों की लहरें भी मनुष्य को उसके उद्देश्य से भटकाने का प्रयास करती रहती हैं। (आपने लोगों को इस संसार को 'भवसागर' कहते हुए सुना होगा)

गीता में अर्जुन-श्रीकृष्ण संवाद में अर्जुन कहता है:-

चञ्चलम हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥ [गीता, ६:३४]

अर्थ: हे कृष्ण ! यह मन बड़ा चंचल और प्रमथन (पीड़ित करना) स्वभाव वाला है तथा बहुत दृढ़ और बलवान है, इसलिए उसका वश में करना मैं वायु को वश में करने की भांति अति दुष्कर मानता हूँ।

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥ [गीता, ६:३५]

अर्थ: भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं:- हे महाबाहो ! निःसन्देह मन चंचल और कठिनता से वश में होनेवाला है, परन्तु हे कुन्तीपुत्र अर्जुन ! अभ्यास (स्थिति के लिए बारम्बार यत्न) करने से और वैराग्य से मन वश में होता है, इसलिए इसको अवश्य वश में करना चाहिए।

निःसन्देह अभ्यास और वैराग्य मनोनिग्रह का रहस्य है, परन्तु प्रश्न यह है कि इन दोनों गुणों को जीवन में कैसे लाया जाए। इसके लिए

- मन पर संयम पाने की इच्छाशक्ति को दृढ बनाना होगा
- मन के स्वभाव को समझना होगा
- बुद्धि को मन में उठे भाव के मंथन के लिए विकसित करना होगा
- कुछ साधना-प्रणालियाँ सीखनी होंगी व तन्मयता व विचारपूर्वक उनका नियमित अभ्यास करना होगा

ऐसा कहना असंगत होगा कि मन को वश में लाने के लिए हममें कोई इच्छाशक्ति नहीं है। हम सभी के भीतर विचार व उद्देश्य प्राप्ति हेतु संघर्ष होता है और यही संघर्ष इच्छाशक्ति के होने का द्योतक है। हाँ! ऐसा अवश्य है कि अधिकांश में मनोनिग्रह की यह इच्छाशक्ति विशेष प्रबल नहीं होती।

मात्र दो प्रकार के लोग ऐसे हैं जिनमें मानसिक संघर्ष नहीं होता। एक वे जो पूर्ण रूप से अपनी निम्न प्रकृति के दास बन चुके हैं व दूसरे वे जिन्होंने अपनी निम्न प्रकृति पर विजय पा ली है। शेष सभी के भीतर किसी न किसी परिमाण में संघर्ष हुआ करते हैं।

यह सबसे महत्त्वपूर्ण है कि इच्छाशक्ति को इतना सुदृढ़ बनाया जाए कि यदि हम बारम्बार असफल भी हों तो भी हम निराश न हों अपितु इसके विपरीत हर असफलता हममें नवीन उत्साह भर दे जिससे हम मनोनिग्रह में पुनः जुट जाए। हमें एक खिलाडी की भाँति, जो स्पर्धा में विफल होने पर निरुत्साहित नहीं होता अपितु स्पर्धा में विजयी होने के लिए अधिक प्रयास करता है, बनना होगा। हमें अपनी बुद्धि को विचारशील व चिंतन करने वाली बनाना होगा कि हम वे सब विषय जो इच्छाशक्ति को दुर्बल बनाते हों उन्हें खोज कर दूर कर सकें व उनके स्थान पर अनुकूल तत्त्वों को ला कर उनसे ऊर्जा पा सकें। इच्छाशक्ति के दुर्बल होने का एक कारण यह भी है कि हम यह स्पष्ट धारणा नहीं कर पाते कि मनोनिग्रह में वास्तविक बाधा कौन सी है।

(क्रमशः ...)

हम न भूलें कि

- जब तक हम ऐन्द्रिक सुख की प्राप्ति जीवन का प्रमुख प्रयोजन मानते हैं और जब तक हम विचारपूर्वक उसका सर्वथा त्याग नहीं कर देते तब तक मन को वश में करने का संकल्प सबल व सफल नहीं हो सकता।
- ऐन्द्रिक सुख की लालसा वास्तव में एक नासूर (ऐसा घाव जिसमें से बराबर मवाद निकलता हो) की भाँति है जो मनोनिग्रह के संकल्प को चूसकर शिथिल करती रहती है।
- सुख-भोग की स्पृहा को त्याग देने के पश्चात भी मन को नियंत्रण में लाना सहज नहीं है। मन तो पुरानी यादों को उठाकर हमें सदैव पीड़ा देता रहेगा।
- जब तक सुख पाने की लालसा बनी हुई है, तब तक हम चाहे जो कुछ भी कर लें हम मन को पूर्ण नियंत्रण में नहीं ला सकते।

०४. ०९. २०२२

of great importance for all human beings as it is the mind that influences us the most. Just as the rising waves and wind (circumstances) in the ocean, which can deviate the sailor from his destination, the waves of thoughts rising in the ocean of the mind also try to deviate the person from his purpose. (You must have heard people calling this world as 'Bhavsāgar')

In the Arjun-Shri Krishṇ dialogue in the Gita, Arjun says

chanchalam hi manḥ krishṇ pramāthi balvaddriḍham
tasyāham nigraham manye vāyoriv suduśhkaram [Gita 6:34]

Meaning: O Krishṇ! this mind is very fickle, gives suffering and is very strong. I consider controlling it, it to be as difficult as controlling the wind.

asanśhayam mahābāho mano durnigraham chalam
abhyāsen tu kauntey vairāgyeṇ cha grhyate [Gita 6:35]

Meaning: Shri Krishṇ says:- No doubt the mind is fickle and difficult to control, but Arjun, the son of Kunti! the mind is controlled by practice (repeated efforts to reach a stage) and by detachment, so it must be controlled.

Undoubtedly, practice and detachment are the secrets of self-control, but the question is how to bring these two qualities to life. To achieve this

- one will have to strengthen his will to gain control over his mind
- one will have to understand the nature of the mind
- the intellect has to be developed for the evaluation of the thoughts arising in the mind.
- Some practice methods have to be learned and practiced regularly with due diligence and thought.

It is incorrect to say that we have no will to control the mind. There is a struggle for the achievement of the thought and reason within each one of us .This struggle is a sign of the presence of will. Yes! It is correct that in most of the people this will of control over the mind is not particularly strong.

There are only two types of people who do not have mental conflict. One, those who have become slave to their instincts (nature) and others whose intellect has full control over their nature. There is some degree of conflict within everyone else.

It is very important that the will is made so strong that even if we fail repeatedly, we do not get discouraged, but on the contrary, every failure fills us with new enthusiasm, so that we can again engage in taking control over our mind. We have to be like a player, who does not get discouraged when he fails in the competition but puts more effort to win the competition. We must make our intellect thoughtful and contemplative so that we can find and remove all those subjects which weaken the will and replace them with favorable elements to get energy from them. One of the reasons for the weakness of the will is that we are not able to have a clear idea of what are the real obstacles in gaining control over mind.

(to continue ...)

Let us not forget that

- As long as we consider the attainment of sensual pleasure as the main purpose of life and unless we consciously abandon it completely, the resolve to control the mind cannot be strong and successful.
- The longing for sensual pleasure is actually like a canker (a wound from which pus profuses) which weakens the will to take control of mind.
- It is not easy to bring the mind under control even after giving up the spirit for acquiring pleasures. The mind will always torment us by picking up old memories.
- As long as the longing for happiness remains, no matter what we do, we cannot bring the mind under complete control.

04.09.2022

www.humnaabhooleen.com